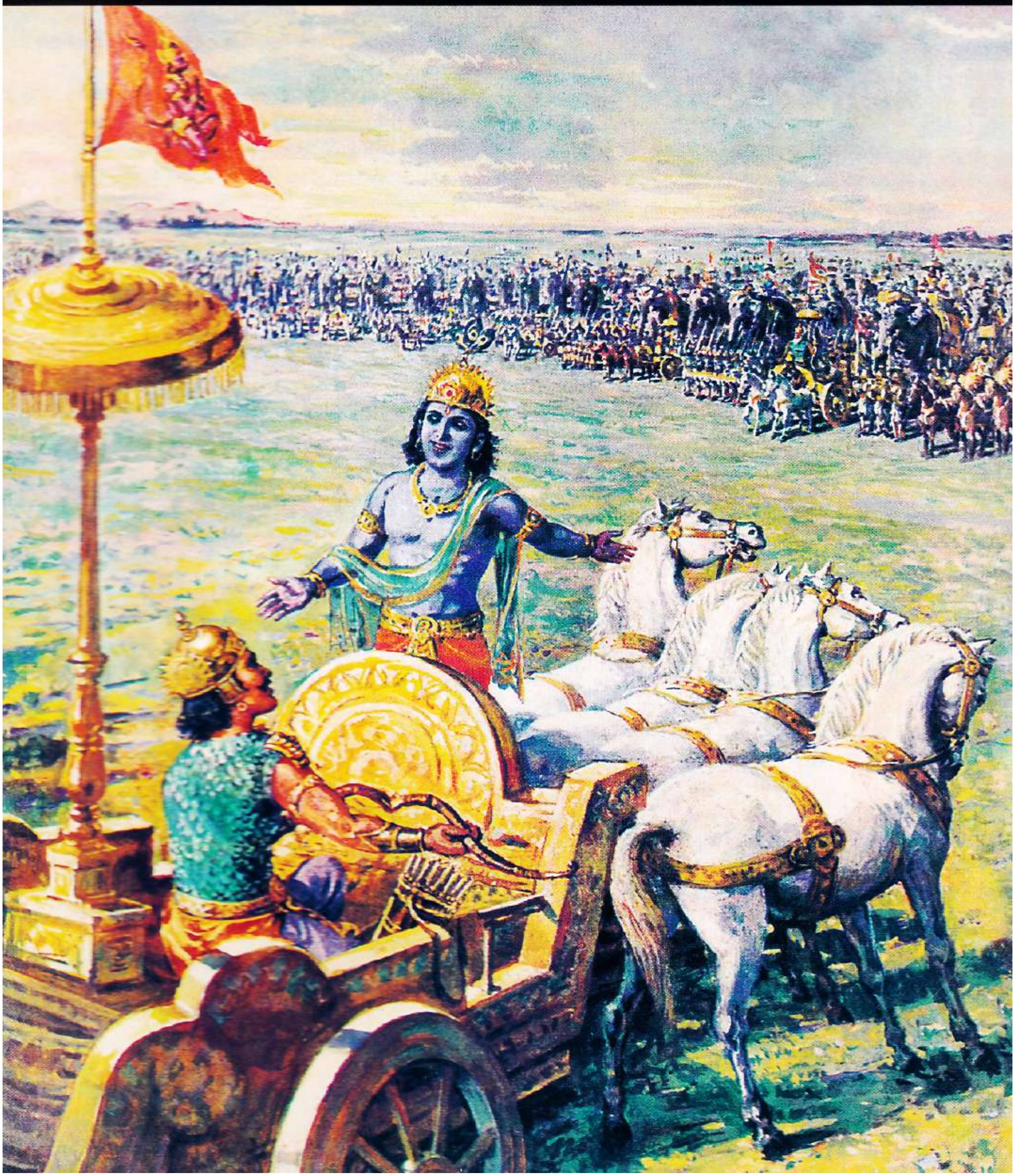
अमर चित्र कथा

गीता

संख्या ५०५

₹९०



तलाश अपनी जड़ों की

जब वे मुड़ कर अपने बचपन के उन दिनों की ओर देखते हैं, जब उनके व्यक्तित्व का विकास हो रहा था, तब अनेक भारतीय बड़े स्नेह से अमर चित्र कथा की उन सचित्र पुस्तकों को याद करते हैं, जिन्होंने उनके जीवन में अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। यह एसीके – अमरचित्र कथा ही थीं जिन्होंने उन्हें अपनी भव्य विरासत की पहली झलक दिखलाई थी।

अमर चित्र कथा १९६७ में पेश की गयीं। इस समय चुनने के लिए अमर चित्र कथा की ४०० से ज़्यादा पुस्तकें उपलब्ध हैं। संसारभर में इनकी ९ करोड़ से ज़्यादा प्रतियां बिक चुकी हैं।

अब अमर चित्र कथा की पुस्तकें और भी बड़े पैमाने पर उपलब्ध हैं – भारतभर में १०००+ पुस्तक विक्रेताओं के पास। अपने नज़दीकी विक्रेता का पता जानने के लिए यहां लॉग ऑन करें : **www.ack-media.com.** अगर किसी पुस्तक विक्रेता तक पहुंचना आसान न हो तो आप सभी पुस्तकें हमारे ऑनलाइन स्टोर **www.amarchitrakatha.com** से ख़रीद सकते हैं। हम संसारभर में हर जगह पुस्तकें बड़ी जल्दी पहुंचा देते हैं।

हमारे पुस्तकों के भंडार में से आपको अपनी मनपसंद पुस्तक चुनने में आसानी हो, इसके लिए हमने पुस्तकों को पांच वर्गों में विभाजित किया है।

महाकाव्य तथा धार्मिक कथाएं
महाकाव्यों एवं पुराणों की सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ

भारतीय साहित्य
भारतीय साहित्य की मनमोहक कहानियाँ

लोक कथाएं तथा हास्य कथाएं
सदाबहार लोक कथाएं, दंत कथाएं तथा विवेक और हास्य से भरी कहानियाँ

शूरवीर
वीर पुरुषों तथा महिलाओं की मन छूने वाली कहानियाँ

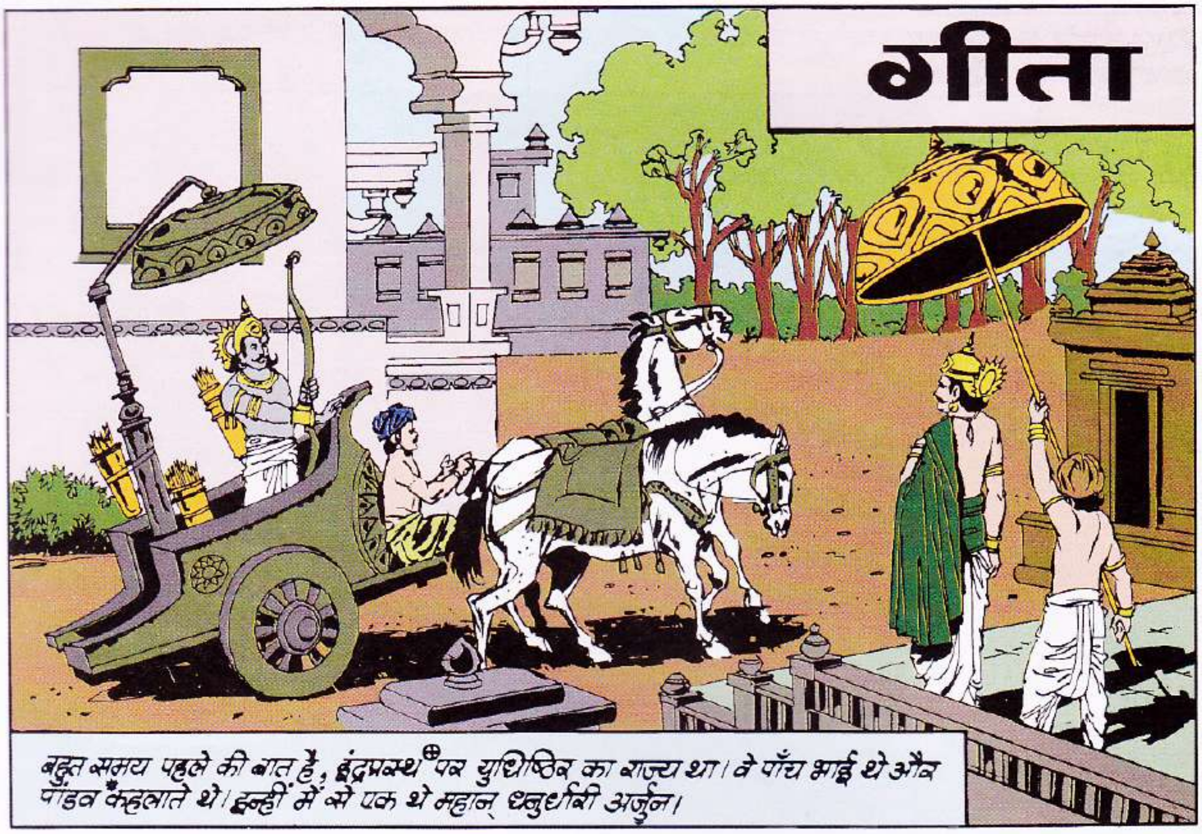
दूरदृष्टा
विचारकों, समाज सुधारकों तथा राष्ट्र निर्माताओं की प्रेरक कहानियाँ

समकालीन साहित्य
भारतीय समकालीन साहित्य की उत्कृष्ट कहानियाँ

कथा	चित्र	संपादक
अनंत पै	प्रताप मुलिक	अनंत पै

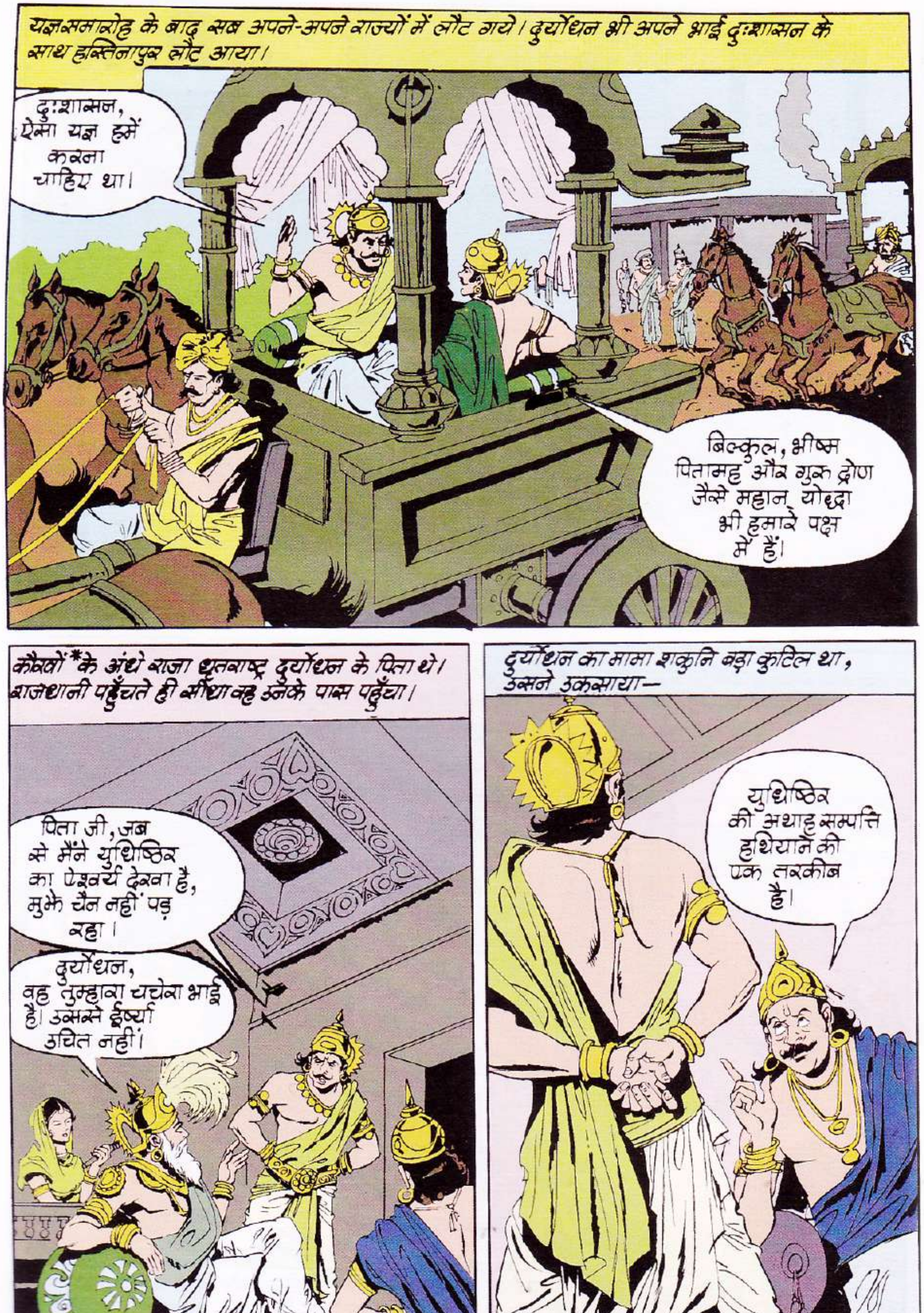
Amar Chitra Katha Pvt Ltd

ISBN 978-81-8482-309-7
Published by Amar Chitra Katha Pvt. Ltd., 204, 2nd Floor, Dhantak Plaza, Makwana Road, Gamdevi, Marol, Andheri (East), Mumbai - 400059, India.
For Consumer Complaints Contact Tel : + 91-2249188881/2
Email: customerservice@ack-media.com
Printed in India





⊕आधुनिक दिल्ली के निकट *पांडुपुत्र होने के नाते


यज्ञसमारोह के बाद सब अपने-अपने राज्यों में लौट गये। दुर्योधन भी अपने भाई दुःशासन के साथ हस्तिनापुर लौट आया।
दुःशासन, ऐसा यज्ञ हमें करना चाहिए था।
बिल्कुल, भीष्म पितामह और गुरु द्रोण जैसे महान योद्धा भी हमारे पक्ष में हैं।
कौरवों* के अंधे राजा धृतराष्ट्र दुर्योधन के पिता थे। राजधानी पहुँचते ही सीधा वह उनके पास पहुँचा।
पिता जी, जब से मैंने युधिष्ठिर का ऐश्वर्य देखा है, मुझे चैन नहीं पड़ रहा।
दुर्योधन, वह तुम्हारा चचेरा भाई है। उससे ईर्ष्या उचित नहीं।
दुर्योधन का मामा शकुनि बड़ा कुटिल था, उसने उकसाया—
युधिष्ठिर की अथाह सम्पत्ति हथियाने की एक तरकीब है।

* कुरुवंश के होने के नाते


सच! मुझे बताओ न!
हम द्यूत-क्रीड़ा के लिए युधिष्ठिर को निमंत्रण देंगे। मुझे एक तरकीब आती है। केवल मैं ही जीतूँगा।
मान लो, वह न आया तो?
द्यूत-क्रीड़ा का निमंत्रण कोई भी स्वाभिमानी राजा ठुकराता नहीं।
पिता जी, आपको उसे बुलाना होगा।
अपने बेटे की ज़िद के कारण ममतावश धृतराष्ट्र को झुकना पड़ा।
जैसी मर्ज़ी! इंद्रप्रस्थ को दूत भेज दो।

धृतराष्ट्र के निमंत्रण पर पांडव हस्तिनापुर आये। चौपड़ बिछी। उन्होंने भारी दाव लगाये। कुछ बाज़ियों के बाद —



युधिष्ठिर राज-पाट हार गये। दाँव की एक शर्त के अनुसार उन्हें बारह वर्ष के वनवास और एक वर्ष के अज्ञातवास को जाना पड़ा।



वनवास की अवधि पूरी कर के पांडव उपप्लव्य गये।

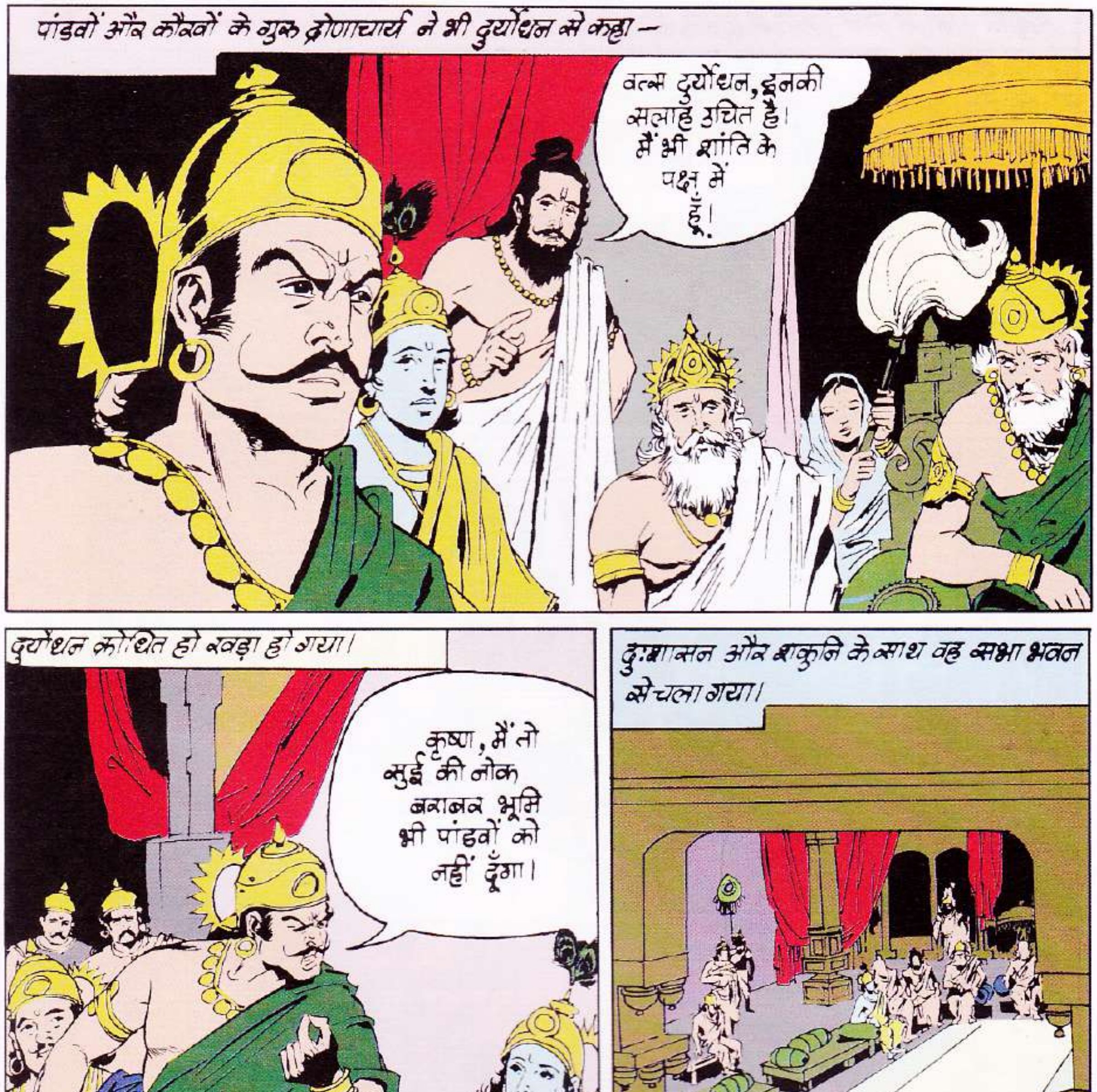


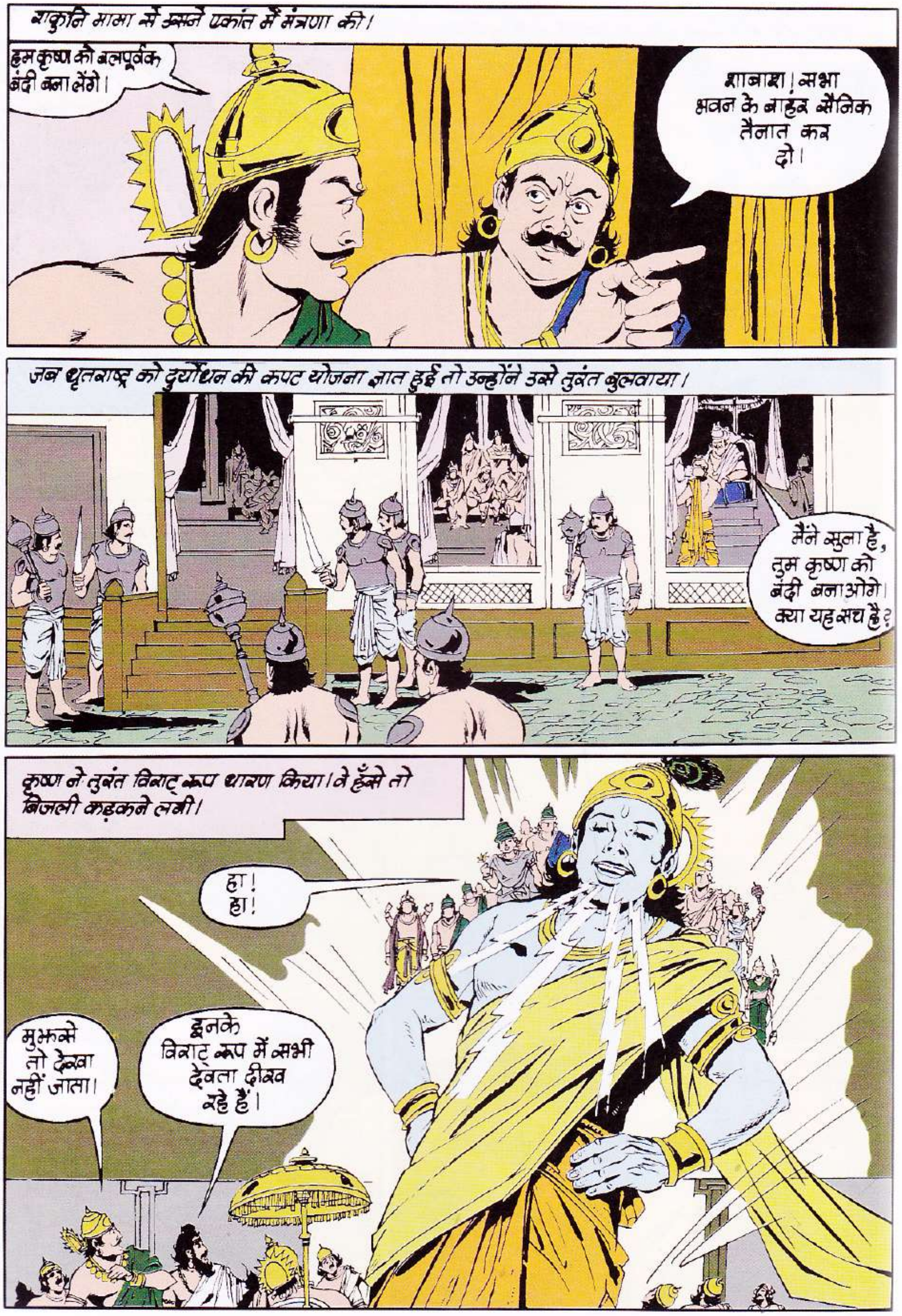

सारे देश से अनेक राजा-राजकुमार सेना सहित आ गये। कृष्ण भी आ गये।
आपका राज्य वापस दिलाने में हम मदद देंगे।
हम आपके साथ हैं। आपका पक्ष न्यायसंगत है।
हमने कौरवों को संदेश भेजा है कि हम केवल पाँच गाँव लेकर संतुष्ट हो जायेंगे। उत्तर की प्रतीक्षा है।

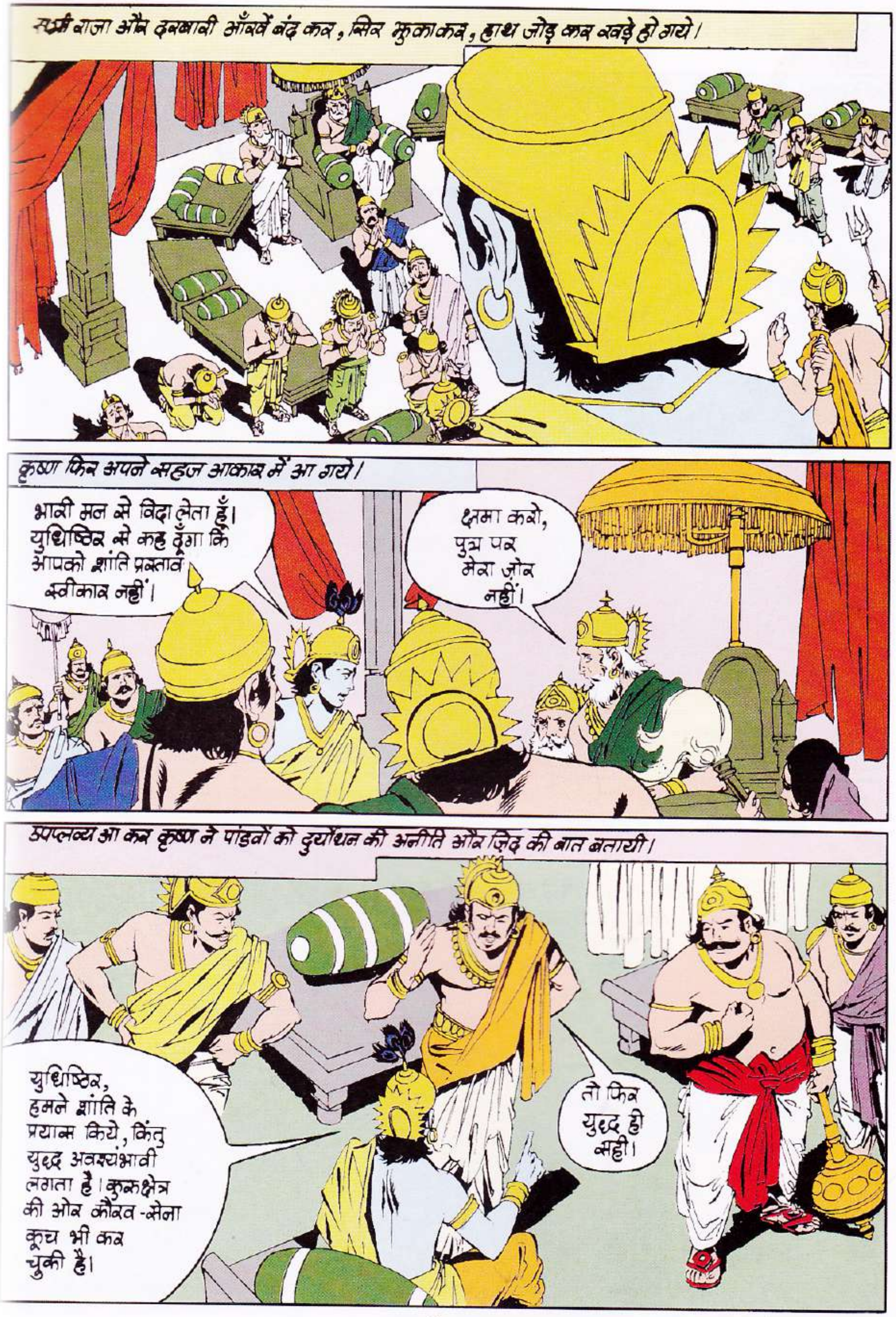

दुर्योधन द्वारा शांति प्रस्ताव ठुकरा दिये जाने पर भीम आग बबूला हो उठा।
अर्जुन! हमने पाँच ही गाँव माँगे तो दुष्ट दुर्योधन समझा होगा कि हम उसकी शक्ति से डरते हैं।
वह युद्ध पर आमादा है, तो युद्ध ही सही।


कृष्ण ने टोका —
युधिष्ठिर, मैं कौरवों के दरबार में शांतिदूत बन कर जाऊँगा। धृतराष्ट्र से तुम्हें न्याय दिलाऊँगा।
आपको जो ठीक लगे कीजिए। लेकिन दुर्योधन से सावधान! वह आपका अहित न करे।

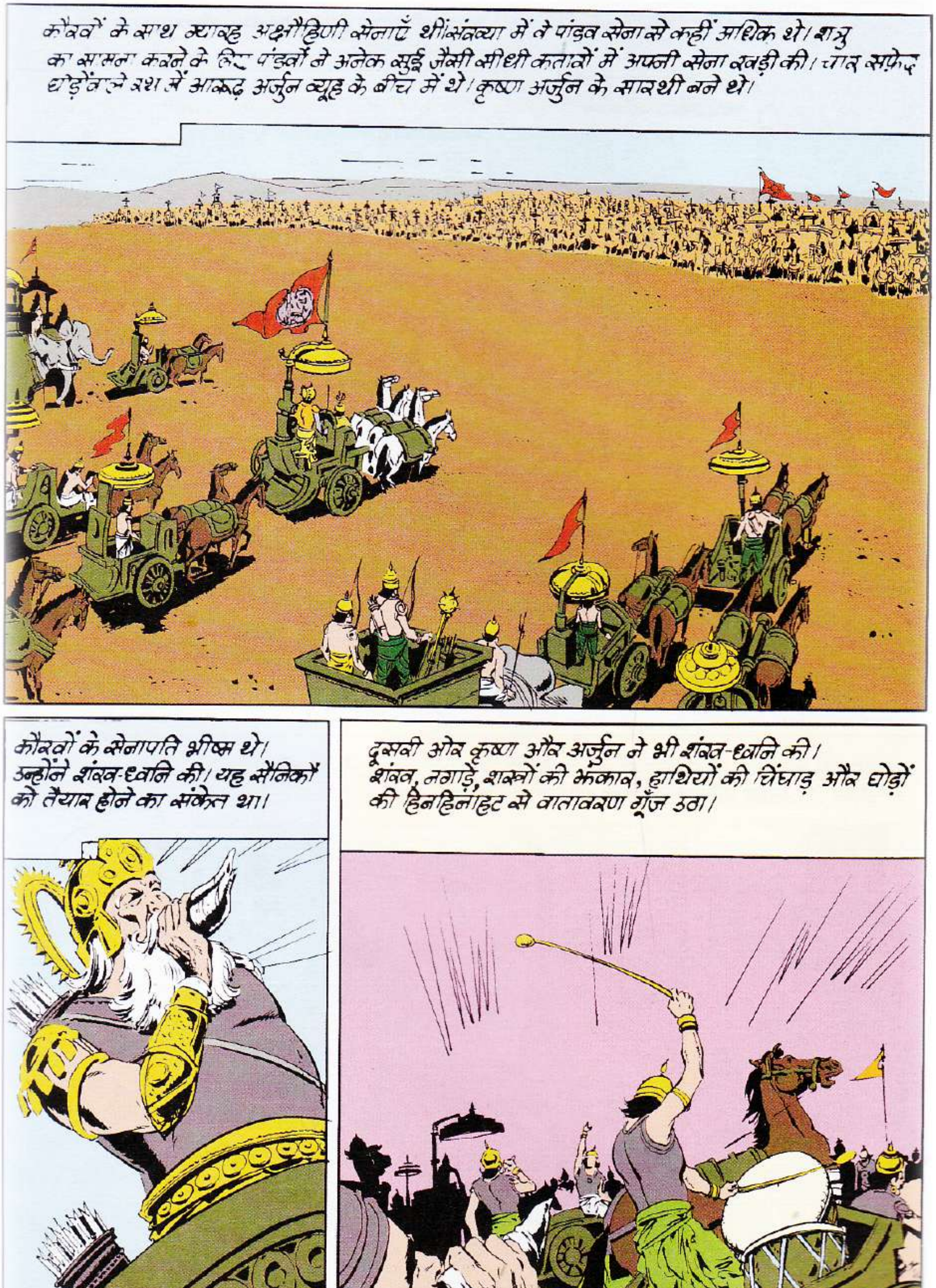

धृतराष्ट्र के दरबार में कृष्ण का ससम्मान स्वागत हुआ।
राजन्! पांडवों का राज्य वापस दे देना चाहिए। ताकि शांति रहे।
मैं सहमत हूँ, कृष्ण! किंतु दुर्योधन युद्ध पर तुला है। उसे समझाइये।
कृष्ण दुर्योधन से बोले —
प्रिय बंधु, पांडव तुम्हें युवराज स्वीकार करेंगे। इसके अतिरिक्त अपने अद्वितीय पराक्रम से वे तुम्हारे पिता को राजाधिराज बना देंगे। सबको मिलजुल कर शांति से रहना चाहिए।
कुरुवंश के वयोवृद्ध भीष्म पितामह ने भी दुर्योधन को शांति प्रस्ताव स्वीकार करने की सलाह दी।
कृष्ण की सलाह उचित है। तुम्हें माननी चाहिए।

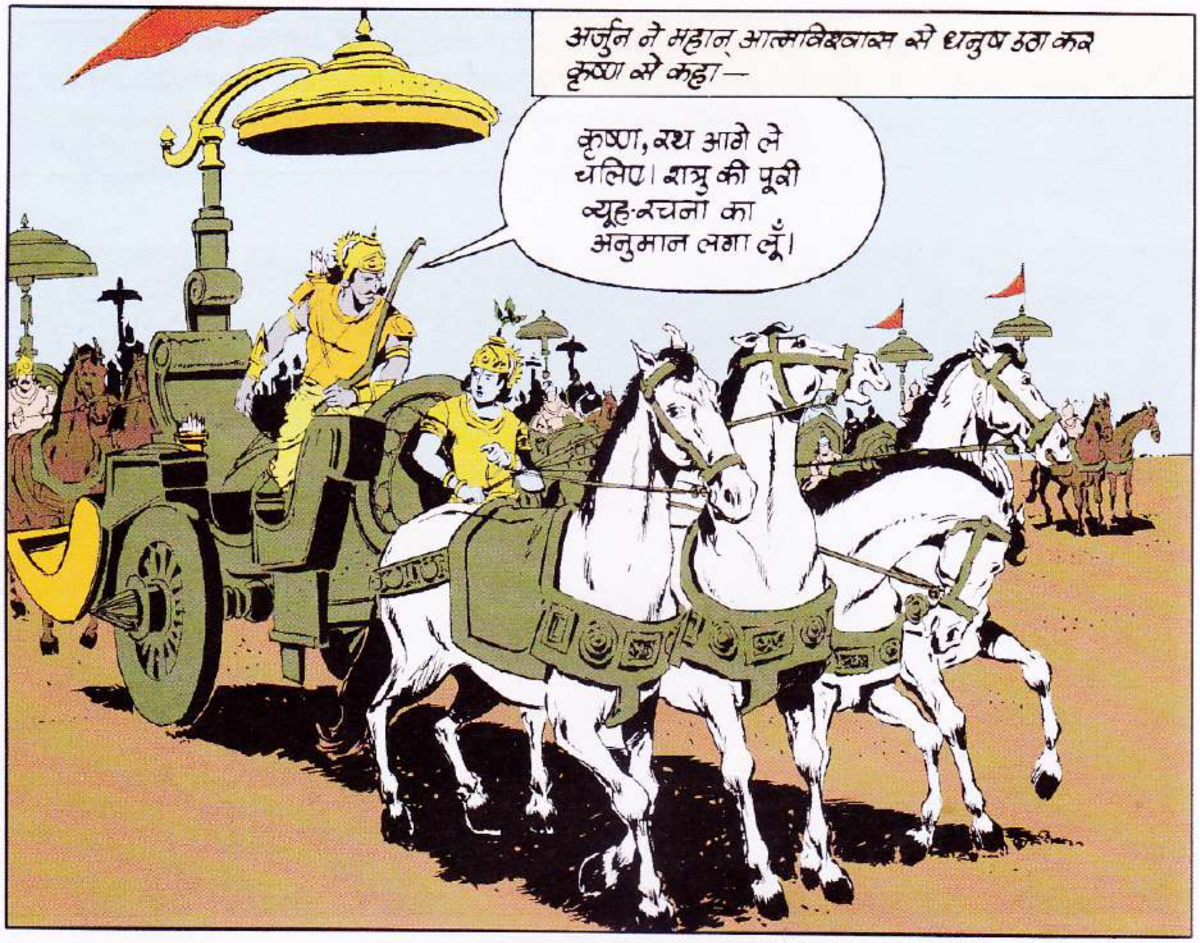

पांडवों और कौरवों के गुरु द्रोणाचार्य ने भी दुर्योधन से कहा –
वत्स दुर्योधन, इनकी सलाह उचित है। मैं भी शांति के पक्ष में हूँ।
दुर्योधन क्रोधित हो खड़ा हो गया।
कृष्ण, मैं तो सुई की नोक बराबर भूमि भी पांडवों को नहीं दूँगा।
दुःशासन और शकुनि के साथ वह सभा भवन से चला गया।


शकुनि मामा से उसने एकांत में मंत्रणा की।
हम कृष्ण को बलपूर्वक बंदी बना लेंगे।
शाबाश! सभा भवन के बाहर सैनिक तैनात कर दो।
जब धृतराष्ट्र को दुर्योधन की कपट योजना ज्ञात हुई तो उन्होंने उसे तुरंत बुलवाया।
मैंने सुना है, तुम कृष्ण को बंदी बनाओगे। क्या यह सच है?
कृष्ण ने तुरंत विराट् रूप धारण किया। वे हँसे तो बिजली कड़कने लगी।
हा! हा!
मुझसे तो देखा नहीं जाता।
इनके विराट् रूप में सभी देवता दीख रहे हैं।


सभी राजा और दरबारी आँखें बंद कर, सिर झुकाकर, हाथ जोड़ कर खड़े हो गये।
कृष्ण फिर अपने सहज आकार में आ गये।
भारी मन से विदा लेता हूँ। युधिष्ठिर से कह दूँगा कि आपको शांति प्रस्ताव स्वीकार नहीं।
क्षमा करो, पुत्र पर मेरा ज़ोर नहीं।
उपप्लव्य आ कर कृष्ण ने पांडवों को दुर्योधन की अनीति और ज़िद की बात बतायी।
युधिष्ठिर, हमने शांति के प्रयास किये, किंतु युद्ध अवश्यंभावी लगता है। कुरुक्षेत्र की ओर कौरव-सेना कूच भी कर चुकी है।
तो फिर युद्ध ही सही।


पांडवों के पास सात अक्षौहिणी सेनाएँ थीं। तुमुल कोलाहल के साथ वे कुरुक्षेत्र के मैदान की ओर बढ़ीं।
युद्ध-क्षेत्र में पांडवों और कौरवों की सेनाएँ आमने-सामने थीं। युद्ध प्रारंभ करने के पहले दोनों पक्षों के नेताओं ने मिल कर नियम तय किये।
रथी केवल रथी से लड़ेगा हाथी-सवार केवल हाथी-सवार से युद्ध करेगा। निहत्थे और अरक्षित सैनिक पर वार नहीं होगा।
ठीक है। सारे दिन के युद्ध के बाद आपस में भाईचारा रहेगा। सूर्योदय के पूर्व और सूर्यास्त के बाद युद्ध नहीं होगा।


कौरवों के साथ ग्यारह अक्षौहिणी सेनाएँ थीं।संख्या में वे पांडव सेना से कहीं अधिक थे। शत्रु का सामना करने के लिए पांडवों ने अनेक सुई जैसी सीधी कतारों में अपनी सेना खड़ी की। चार सफ़ेद घोड़ोंवाले रथ में आरूढ़ अर्जुन व्यूह के बीच में थे। कृष्ण अर्जुन के सारथी बने थे।
कौरवों के सेनापति भीष्म थे। उन्होंने शंख-ध्वनि की। यह सैनिकों को तैयार होने का संकेत था।
दूसरी ओर कृष्ण और अर्जुन ने भी शंख-ध्वनि की। शंख, नगाड़े, शस्त्रों की झंकार, हाथियों की चिंघाड़ और घोड़ों की हिनहिनाहट से वातावरण गूँज उठा।


अर्जुन ने महान् आत्मविश्वास से धनुष उठा कर कृष्ण से कहा—
कृष्ण, रथ आगे ले चलिए। शत्रु की पूरी व्यूह-रचना का अनुमान लगा लूँ।

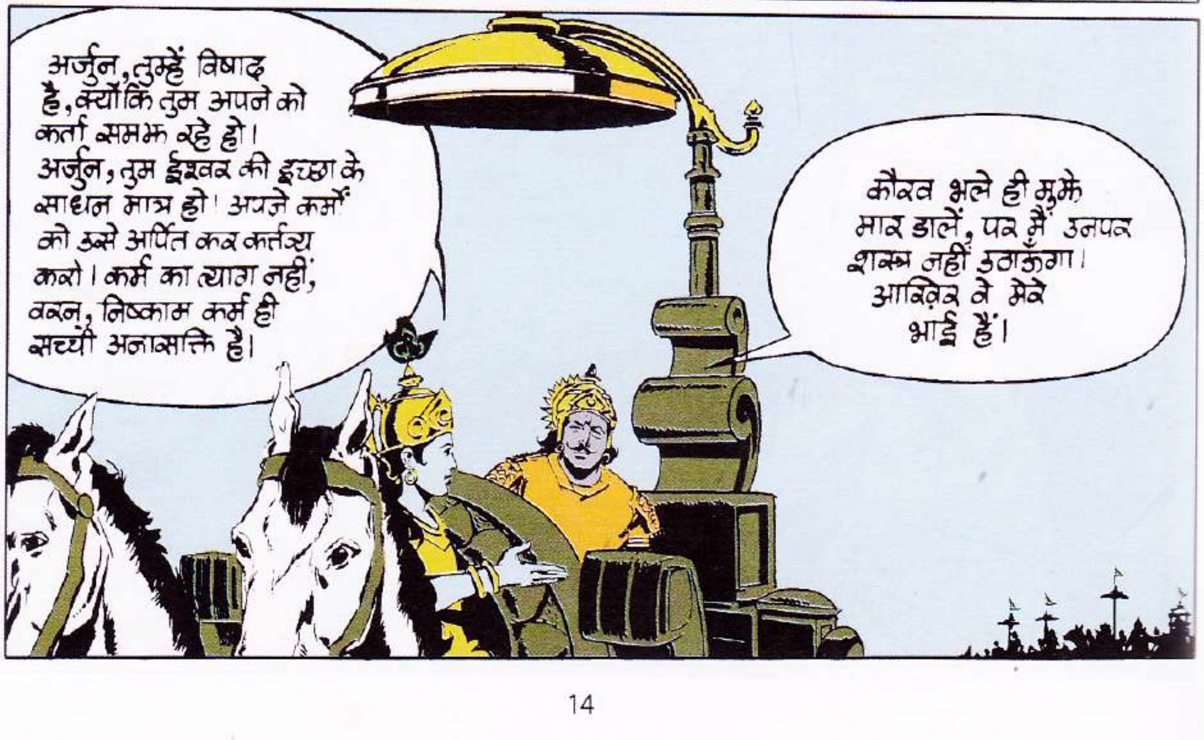

कृष्ण रथ बढ़ाकर दोनों सेनाओं के बीचोबीच ले आये। अर्जुन ने जब विपक्षी सेना को पास से देखा तो उनपर विषाद छा गया और आत्मविश्वास डोल उठा।
कृष्ण, मेरा शरीर काँप रहा है। धनुष पर मेरी पकड़ ढीली पड़ रही है। मैं सीधा खड़ा भी नहीं हो पा रहा।
क्यों, अर्जुन! सहसा यह कैसी दुर्बलता?

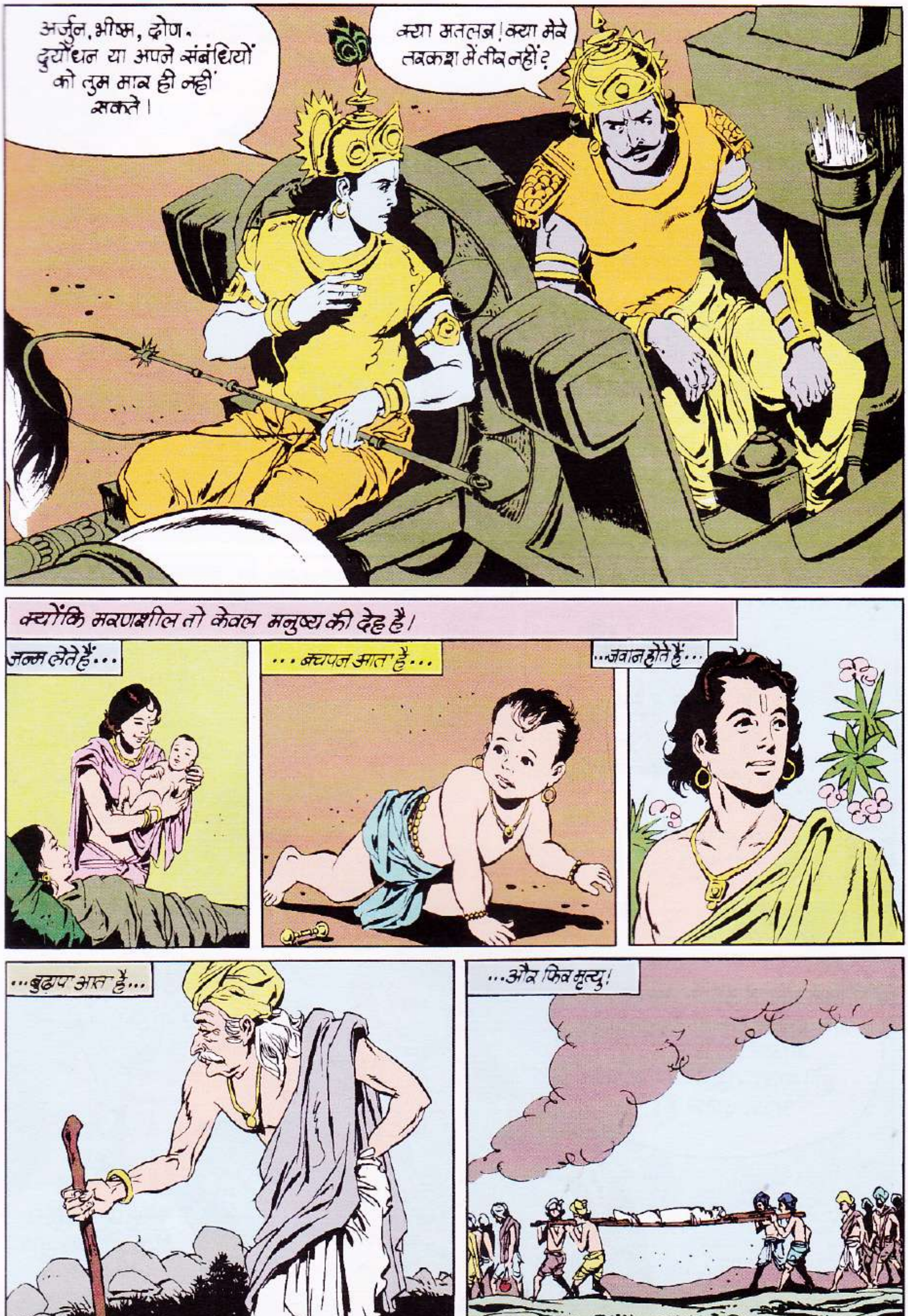

अर्जुन के हाथ से धनुष गिर पड़ा। आँखों में आँसू भरे वे रथ में खिन्न हो कर बैठ गये।
नहीं, मैं अपने ही स्वजनों का वध नहीं कर सकता। अपना राज्य तो दूर, तीनों लोकों का राज्य मिले तो भी नहीं।
अर्जुन यही परीक्षा की घड़ी है। ऐसी कायरता तुम्हें शोभा नहीं देती। युद्ध की घोषणा हो चुकी है। दुर्बलता छोड़ो, शस्त्र उठाओ।
पूज्य पितामह भीष्म को मारूँ? गुरु द्रोण पर निशाना लगाऊँ? यह सब एक तुच्छ राज्य के लिए! नहीं, इससे भला है, मैं भीख माँग कर जी लूँ।
नहीं कृष्ण, मैं युद्ध नहीं कर सकता।

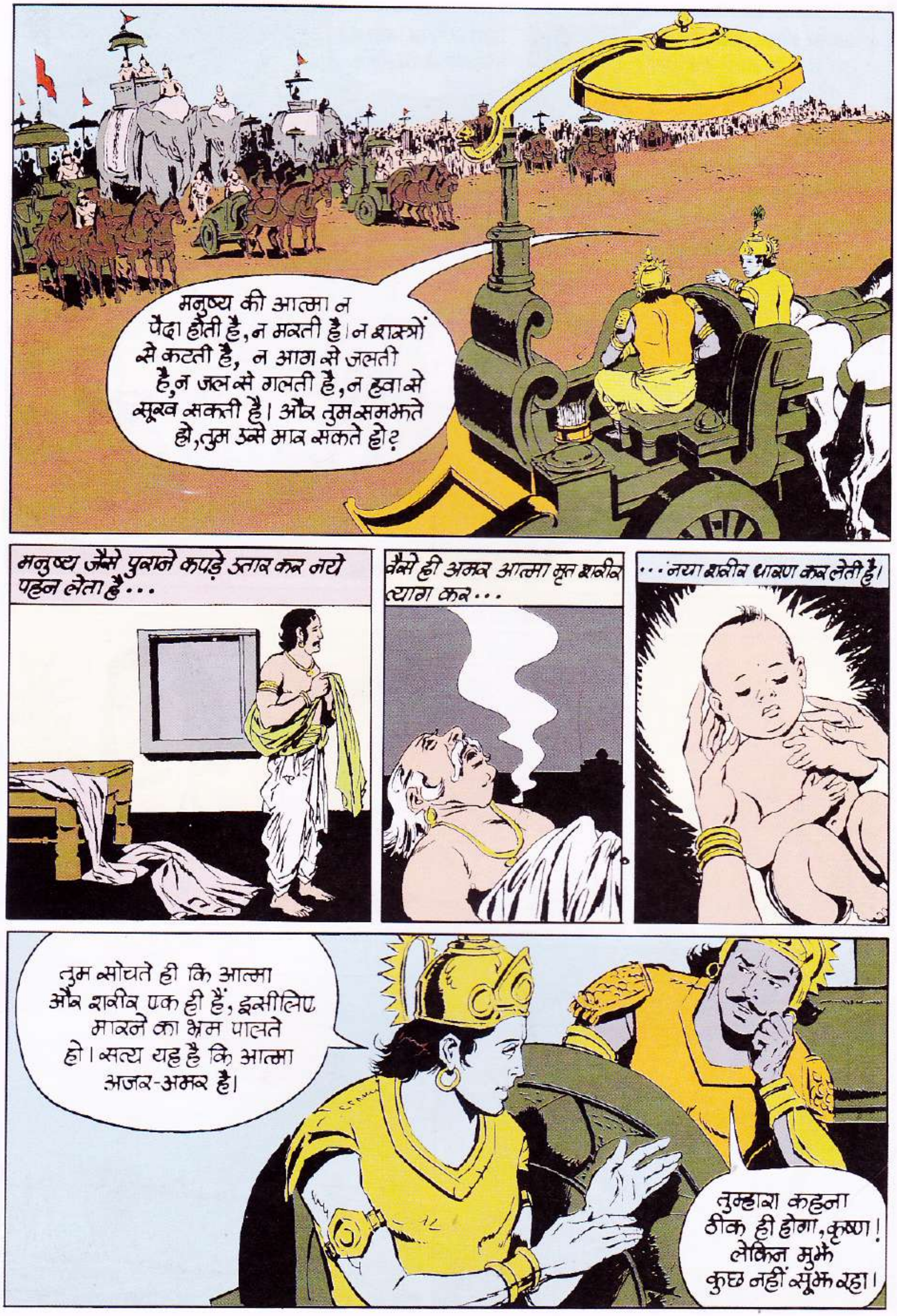

अर्जुन, प्रत्येक देहधारी का कोई न कोई धर्म होता है। तुम क्षत्रिय हो, तुम्हारा स्वधर्म सत्य और न्याय के लिए लड़ना है।


तुम वीर हो। युद्ध-घोषणा के बाद लड़ोगे नहीं तो बुरा उदाहरण होगा। फिर सोचो, यदि सभी अपना-अपना स्वधर्म छोड़ने लगें तो समाज कैसे टिकेगा?


जीवन में तुम्हारे योग्य जो भी धर्म बनता है, वह तुम्हें करना ही चाहिए।

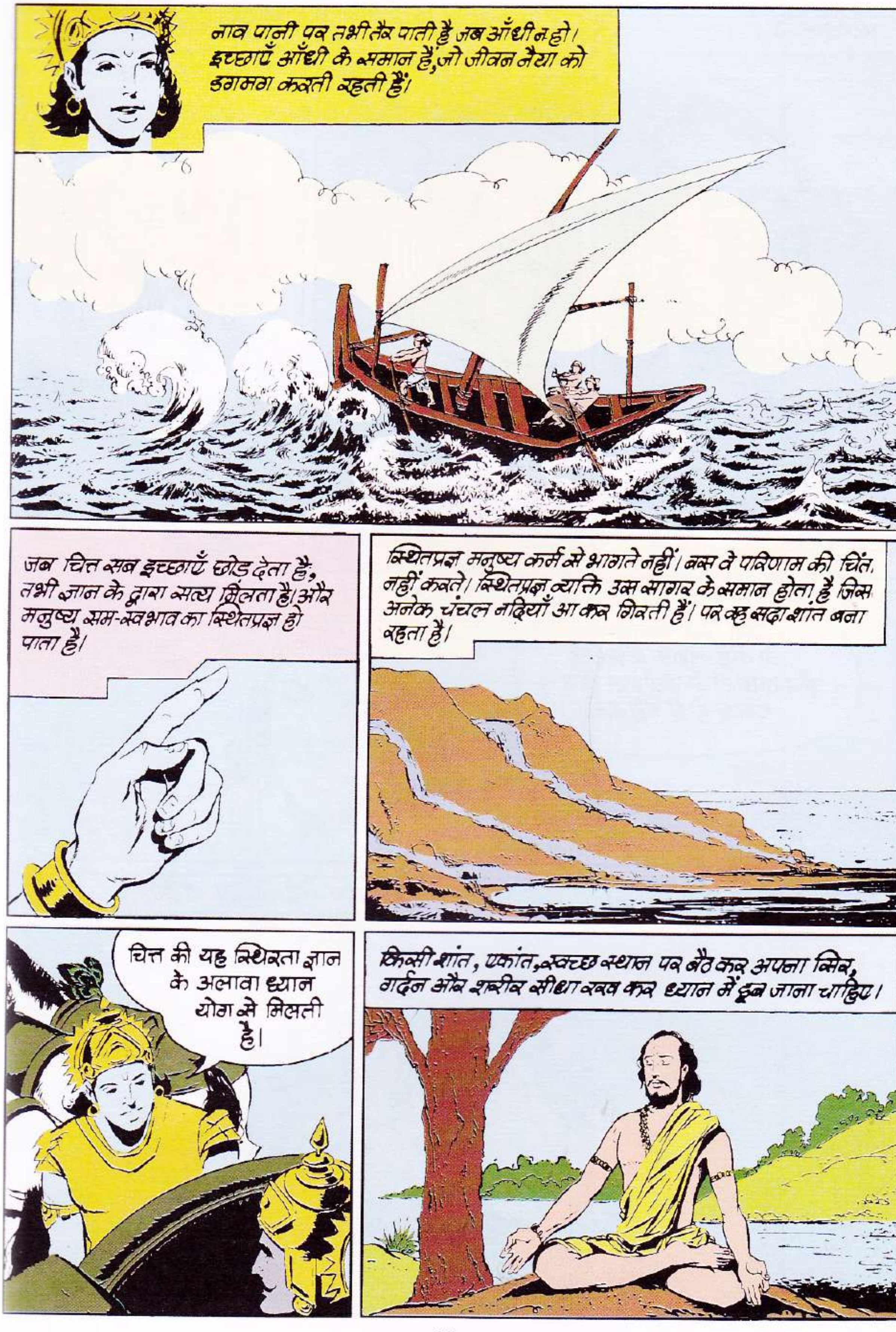

अर्जुन, तुम्हें विषाद है, क्योंकि तुम अपने को कर्ता समझ रहे हो। अर्जुन, तुम ईश्वर की इच्छा के साधन मात्र हो। अपने कर्मों को उसे अर्पित कर कर्त्तव्य करो। कर्म का त्याग नहीं, वरन्, निष्काम कर्म ही सच्ची अनासक्ति है।
कौरव भले ही मुझे मार डालें, पर मैं उनपर शस्त्र नहीं उठाऊँगा। आख़िर वे मेरे भाई हैं।

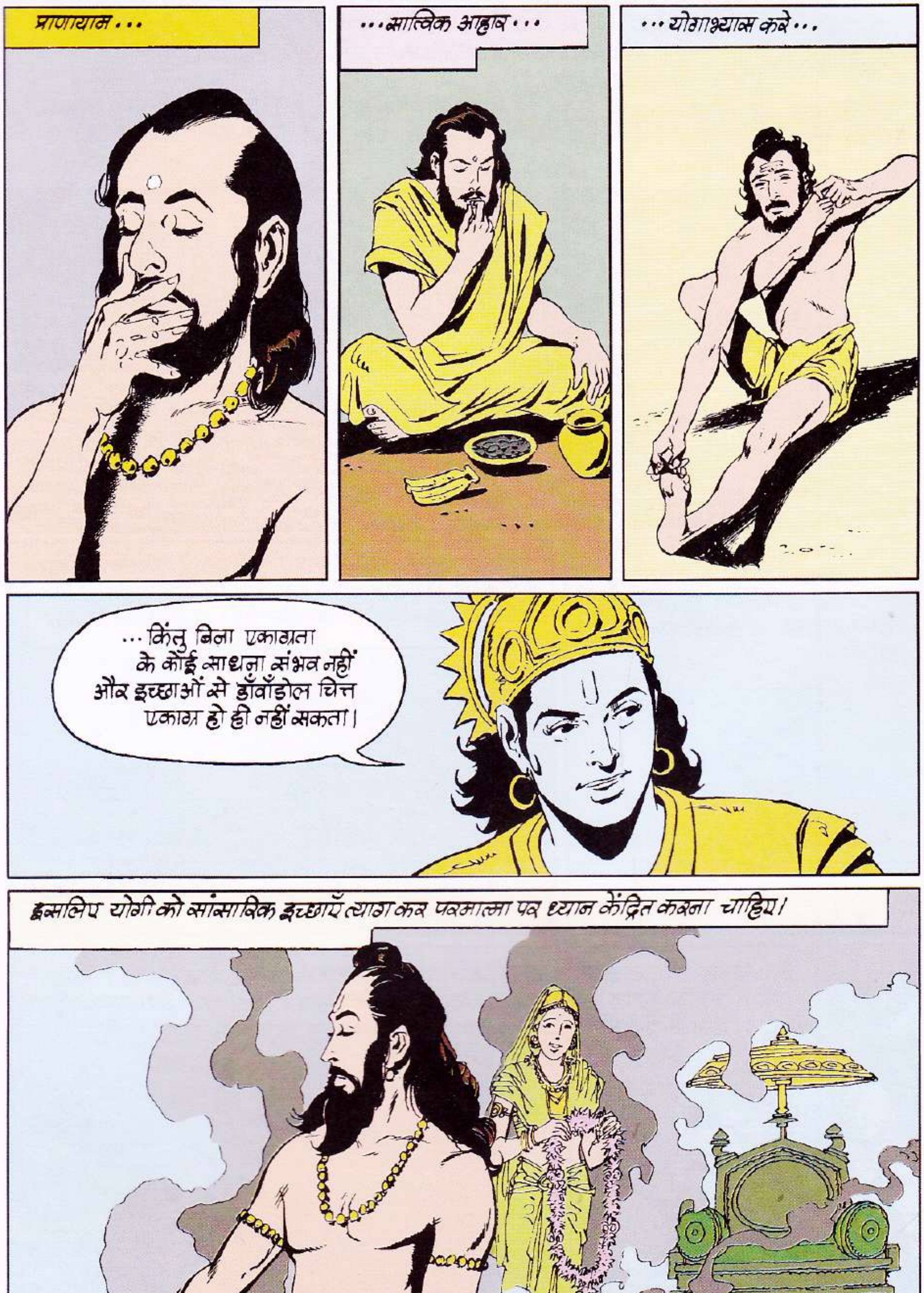

अर्जुन, भीष्म, द्रोण,
दुर्योधन या अपने संबंधियों
को तुम मार ही नहीं
सकते।
क्या मतलब! क्या मेरे
तरकश में तीर नहीं?
क्योंकि मरणशील तो केवल मनुष्य की देह है।
जन्म लेते हैं...
...बचपन आता है...
...जवान होते हैं...
...बुढ़ापा आता है...
...और फिर मृत्यु!

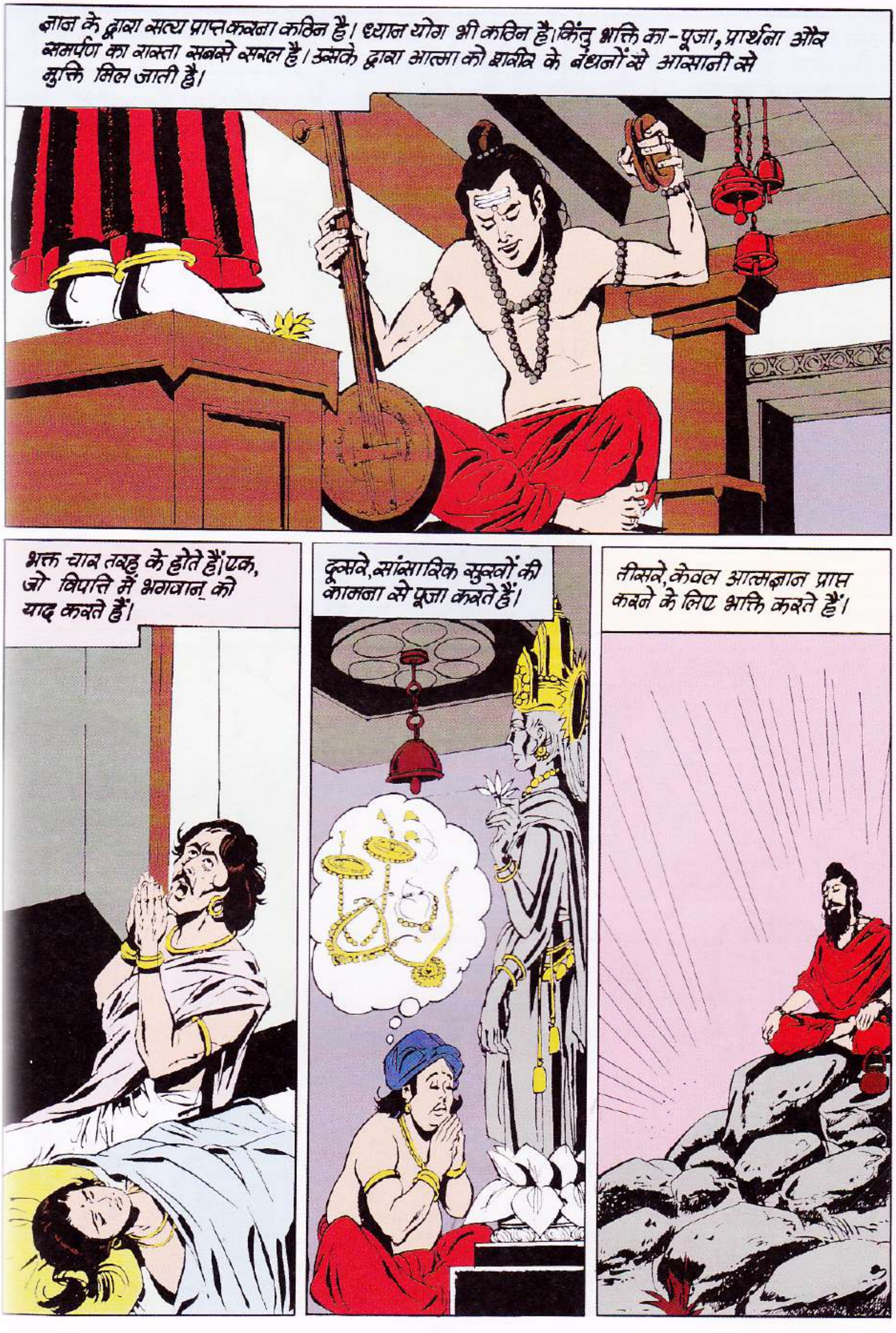

मनुष्य की आत्मा न पैदा होती है, न मरती है। न शस्त्रों से कटती है, न आग से जलती है, न जल से गलती है, न हवा से सूख सकती है। और तुम समझते हो, तुम उसे मार सकते हो?
मनुष्य जैसे पुराने कपड़े उतार कर नये पहन लेता है...
वैसे ही अमर आत्मा मृत शरीर त्याग कर...
...नया शरीर धारण कर लेती है।
तुम सोचते हो कि आत्मा और शरीर एक ही हैं, इसीलिए मारने का भ्रम पालते हो। सत्य यह है कि आत्मा अजर-अमर है।
तुम्हारा कहना ठीक ही होगा, कृष्ण! लेकिन मुझे कुछ नहीं सूझ रहा।


क्योंकि तुम शरीर से बंधे हो। अर्जुन, मनुष्य तीन तरह के होते हैं। निम्न कोटि के वे हैं जो जड़-बुद्धि और आलसी होते हैं।
दूसरे, चंचल और कामुक होते हैं। हर समय उलट-फेर में लगे रहते हैं।
तीसरे, जो ज्ञान खोजते हैं। वे सदैव अच्छे कामों में लगे रहते हैं। पर वे भी शरीर से बँधे रहते हैं। तुम वैसे ही हो।
जब मनुष्य शरीर के बंधनों को भूल कर आत्मा का साक्षात्कार कर ले तब उसे जो ज्ञान प्राप्त होता है उससे वह स्थितप्रज्ञ बन कर बहुत उच्च कोटि में आता है।
स्थितप्रज्ञ मनुष्य के लक्षण क्या हैं?
वह सुख-दुःख में, मान-अपमान में या हानि-लाभ में न हर्ष करता है, न द्वेष। उसके लिए सब कुछ समान है।

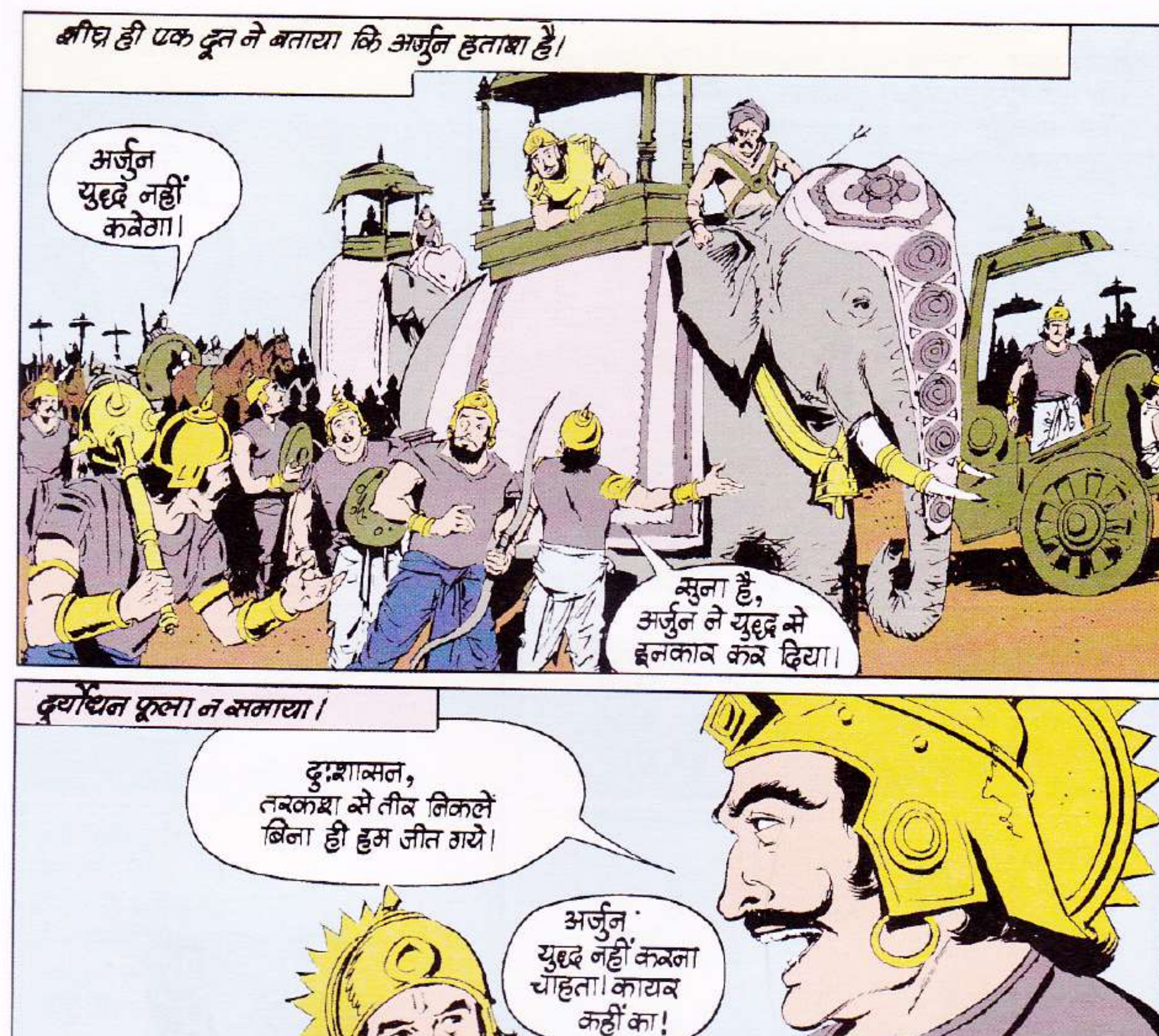

फल का लालच न होने से वह मनुष्य कभी भ्रमित नहीं होता। इसलिए उसका हर काम श्रेष्ठ होता है। यों तुम ज्ञान के द्वारा भी यह सत्य जान सकते हो कि यह जो तुम्हारा शरीर है, तुम केवल यही नहीं हो।
इसे मैं ज्ञान से कैसे समझ सकता हूँ?
ज्ञान अग्नि के समान है। जो कुछ अग्नि में पड़ता है, जल कर भस्म हो जाता है। वैसे ही ज्ञान उन तमाम बंधनों को भस्म कर देता है जो आत्मा को नाशवान शरीर से बाँधते हैं।
कृष्ण, मैं मोह में पड़ा हूँ और संशयग्रस्त हूँ। मुझे आपके तर्क भी समझ में नहीं आ रहे।
अर्जुन, यह घबराहट चित्त में तब आती है जब वह केवल शरीर में सिमटा रहता है। ऐसा चित्त अनेक इच्छाएँ रखता है, पूरी न होने पर दुःखी होता है। कामना पूरी न हो पाने की आशंका तक घबराहट देती है।


नाव पानी पर तभी तैर पाती है जब आँधी न हो। इच्छाएँ आँधी के समान हैं, जो जीवन नैया को डगमगा करती रहती हैं।
जब चित्त सब इच्छाएँ छोड़ देता है, तभी ज्ञान के द्वारा सत्य मिलता है। और मनुष्य सम-स्वभाव का स्थितप्रज्ञ हो पाता है।
स्थितप्रज्ञ मनुष्य कर्म से भागते नहीं। बस वे परिणाम की चिंता नहीं करते। स्थितप्रज्ञ व्यक्ति उस सागर के समान होता है जिसमें अनेक चंचल नदियाँ आ कर गिरती हैं। पर वह सदा शांत बना रहता है।
चित्त की यह स्थिरता ज्ञान के अलावा ध्यान योग से मिलती है।
किसी शांत, एकांत, स्वच्छ स्थान पर बैठ कर अपना सिर, गर्दन और शरीर सीधा रख कर ध्यान में डूब जाना चाहिए।


प्राणायाम ...
...सात्विक आहार ...
...योगाभ्यास करे...
... किंतु बिना एकाग्रता
के कोई साधना संभव नहीं
और इच्छाओं से डाँवाँडोल चित्त
एकाग्र हो ही नहीं सकता।
इसलिए योगी को सांसारिक इच्छाएँ त्याग कर परमात्मा पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

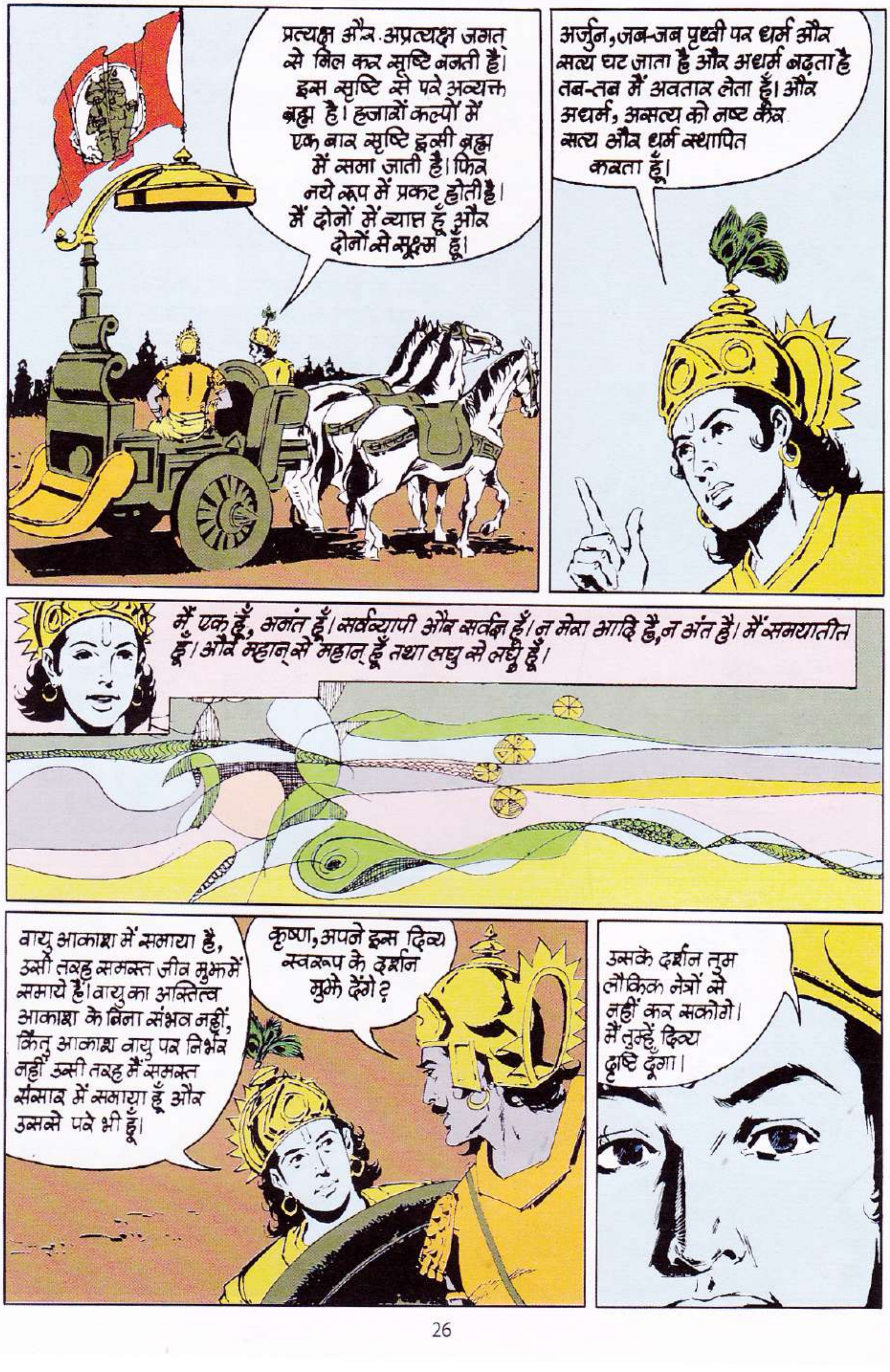

ज्ञान के द्वारा सत्य प्राप्त करना कठिन है। ध्यान योग भी कठिन है। किंतु भक्ति का - पूजा, प्रार्थना और समर्पण का रास्ता सबसे सरल है। उसके द्वारा आत्मा को शरीर के बंधनों से आसानी से मुक्ति मिल जाती है।
भक्त चार तरह के होते हैं। एक, जो विपत्ति में भगवान् को याद करते हैं।
दूसरे, सांसारिक सुखों की कामना से पूजा करते हैं।
तीसरे, केवल आत्मज्ञान प्राप्त करने के लिए भक्ति करते हैं।

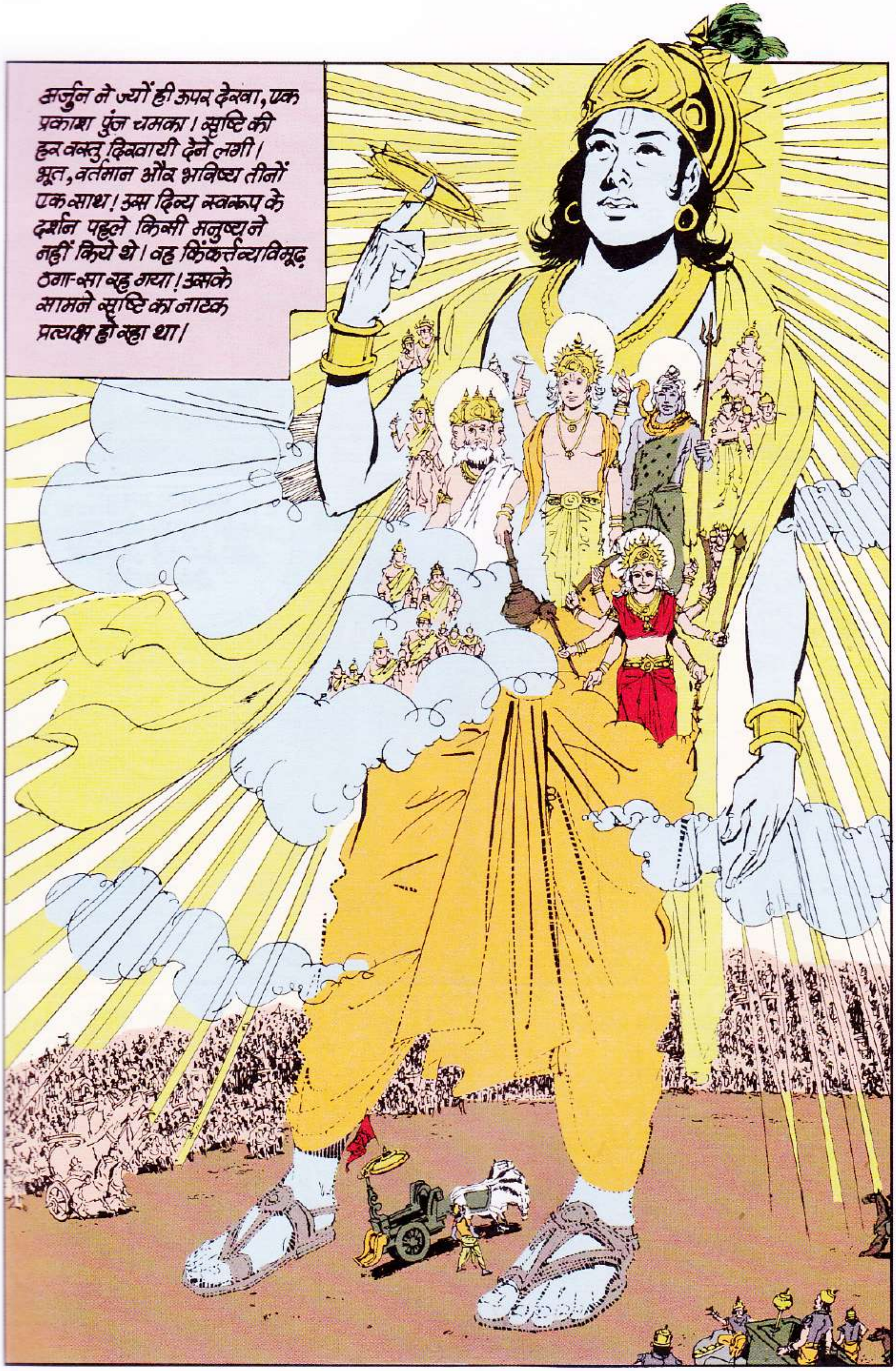

और चौथे वे होते हैं, जो चरम समर्पण के द्वारा आत्मा में परमात्मा और परमात्मा में आत्मा के दर्शन करते हैं। उनका हर काम पूजा होता है।
उधर अर्जुन की उदासीनता और निराशा से पांडव-सेना पर मुर्दनी छायी थी।
अर्जुन इतने निराश क्यों हैं? क्या कौरवों की संख्या देख कर घबरा गये हैं?
नहीं, भीम! ऐसा नहीं हो सकता। उन्होंने आज ही कहा था, कृष्ण जिधर हैं, जीत उसी की होगी।
दुर्योधन भी चक्कर में था।
अर्जुन ने धनुष क्यों रख दिया? कृष्ण उसे क्या समझा रहे हैं?
पता लगाते हैं। शायद हमारी बड़ी सेना को देख कर अर्जुन के छक्के छूट गये हैं!

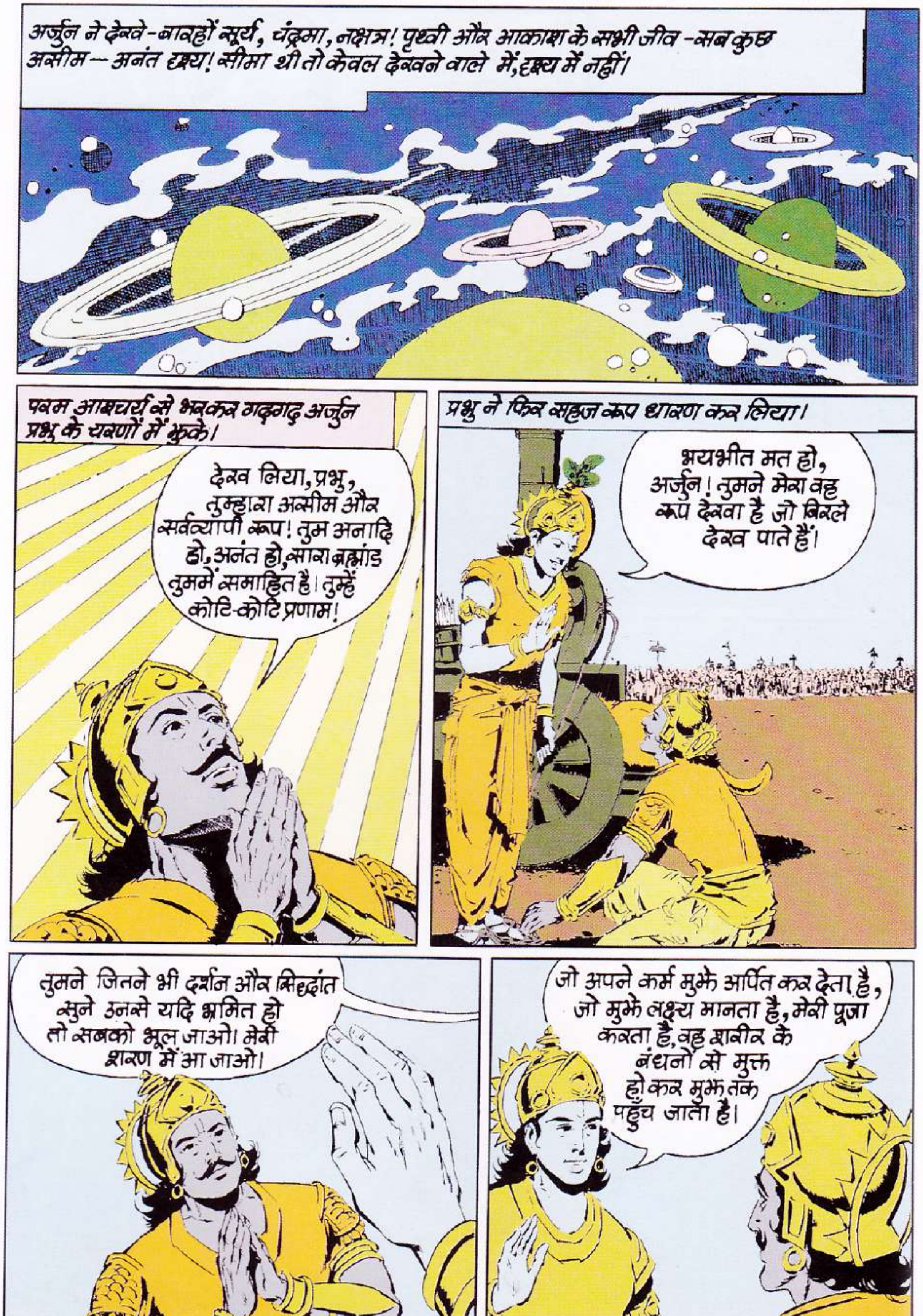

शीघ्र ही एक दूत ने बताया कि अर्जुन हताश है।
अर्जुन युद्ध नहीं करेगा।
सुना है, अर्जुन ने युद्ध से इनकार कर दिया।
दुर्योधन फूला न समाया।
दुःशासन, तरकश से तीर निकलें बिना ही हम जीत गये।
अर्जुन युद्ध नहीं करना चाहता। कायर कहीं का!
इधर —
लगता है कि सारे सांसारिक कर्म त्याज्य हैं, क्योंकि वे शरीर से बँधी आत्मा के परिणाम हैं। अब मैं सभी कर्म छोड़ दूँगा।
लेकिन कर्म न करने से ही तो इच्छाएँ मर नहीं जातीं!


एकांत में बैठा निष्क्रिय व्यक्ति भी अपने चित्त में सुख और भोग की कल्पना में डूबा रह सकता है। केवल शारीरिक कर्म छोड़ना व्यर्थ है।
कुछ लोग केवल आलस्य के कारण भी कर्म त्याग देते हैं।
कर्म करो, अर्जुन! शरीर की रक्षा के लिए भी कर्म आवश्यक है। कर्म से मुक्ति नहीं।
पर मेरे और दूसरों के कर्म मुझे सुख, दुःख, चिंता, बेचैनी तो देंगे ही।
यही तो सामान्य स्थिति है। किंतु कर्म करते हुए भी तुम मुक्त हो सकते हो।
तुम्हें बता चुका हूँ, ध्यान योग, ज्ञान योग या भक्तियोग के द्वारा तुम कर्मों के सांसारिक प्रभावों से मुक्त हो सकते हो।
तुम्हारे समान कर्मशील व्यक्ति के लिए दो रास्ते और हैं।


पहला तो है-कर्म संन्यास का। कर्म करो पर स्वयं को परमात्मा का साधन मात्र समझ कर। दूसरा रास्ता उससे सरल है। वह है कर्मयोग! तुम केवल कर्म करने का अधिकार रखते हो, फल की बात मत सोचो। इस राह पर चल कर तुम शरीर के बंधनों से मुक्त हो सकते हो।
इस परमज्ञान के तत्व को मैंने सृष्टि के प्रारंभ में विवस्वत को बताया था। उसने मनु को और मनु ने...
सृष्टि के प्रारंभ में? आप तो तब पैदा भी नहीं हुए थे। आप प्रथम पुरुष मनु से बड़े कैसे हो गये?
अर्जुन, तुम्हें यह सब ज्ञात नहीं है। तुम्हें यह भी ज्ञात नहीं कि तुम अनेक जीवन पहले भी जी चुके हो। मैं वह नहीं हूं जो तुम समझते हो। मैं भूत, भविष्य और वर्तमान सबका प्रभु हूँ।
कृष्ण की इस बात पर अर्जुन अवाक् रह गये।


प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष जगत से मिल कर सृष्टि बनती है। इस सृष्टि से परे अव्यक्त ब्रह्म है। हजारों कल्पों में एक बार सृष्टि इसी ब्रह्म में समा जाती है। फिर नये रूप में प्रकट होती है। मैं दोनों में व्याप्त हूँ और दोनों से सूक्ष्म हूँ।
अर्जुन, जब-जब पृथ्वी पर धर्म और सत्य घट जाता है और अधर्म बढ़ता है तब-तब मैं अवतार लेता हूँ। और अधर्म, असत्य को नष्ट कर सत्य और धर्म स्थापित करता हूँ।
मैं एक हूँ, अनंत हूँ। सर्वव्यापी और सर्वज्ञ हूँ। न मेरा आदि है, न अंत है। मैं समयातीत हूँ। और महान् से महान् हूँ तथा लघु से लघु हूँ।
वायु आकाश में समाया है, उसी तरह समस्त जीव मुझमें समाये हैं। वायु का अस्तित्व आकाश के बिना संभव नहीं, किंतु आकाश वायु पर निर्भर नहीं उसी तरह मैं समस्त संसार में समाया हूँ और उससे परे भी हूँ।
कृष्ण, अपने इस दिव्य स्वरूप के दर्शन मुझे देंगे?
उसके दर्शन तुम लौकिक नेत्रों से नहीं कर सकोगे। मैं तुम्हें दिव्य दृष्टि दूंगा।


अर्जुन ने ज्यों ही ऊपर देखा, एक प्रकाश पुंज चमका। सृष्टि की हर वस्तु दिखायी देने लगी। भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों एक साथ! उस दिव्य स्वरूप के दर्शन पहले किसी मनुष्य ने नहीं किये थे। वह किंकर्त्तव्यविमूढ़ ठगा-सा रह गया! उसके सामने सृष्टि का नाटक प्रत्यक्ष हो रहा था।



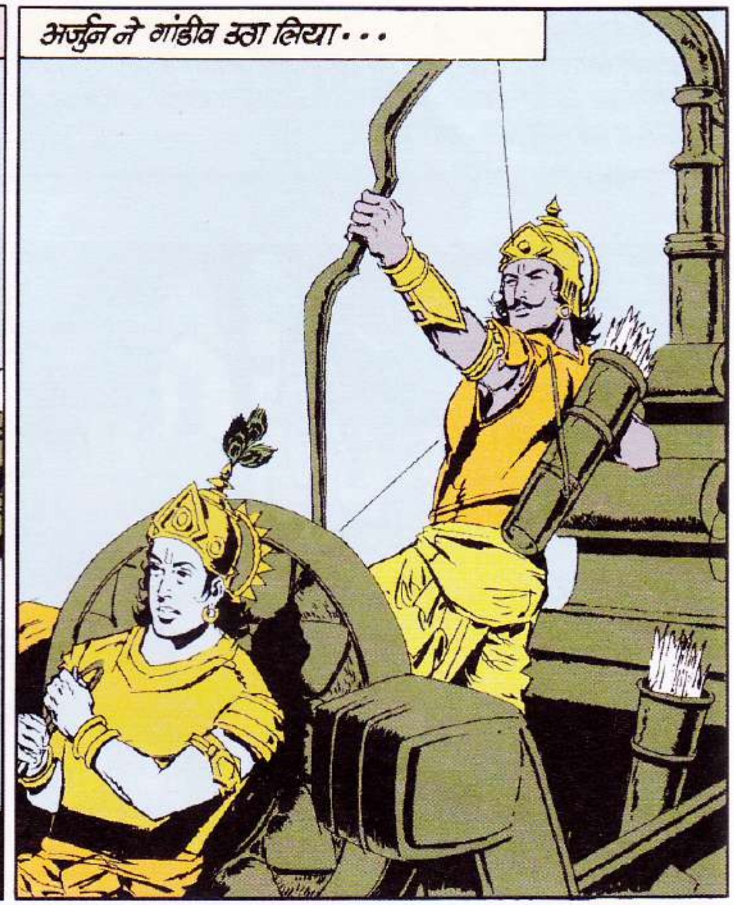
अर्जुन ने देखे-बारहों सूर्य, चंद्रमा, नक्षत्र! पृथ्वी और आकाश के सभी जीव -सब कुछ असीम — अनंत दृश्य! सीमा थी तो केवल देखने वाले में,दृश्य में नहीं।
परम आश्चर्य से भरकर गद्गद् अर्जुन प्रभु के चरणों में झुके।
देख लिया,प्रभु, तुम्हारा असीम और सर्वव्यापी रूप! तुम अनादि हो,अनंत हो,सारा ब्रह्मांड तुममें समाहित है। तुम्हें कोटि-कोटि प्रणाम!
प्रभु ने फिर सहज रूप धारण कर लिया।
भयभीत मत हो, अर्जुन! तुमने मेरा वह रूप देखा है जो बिरले देख पाते हैं।
तुमने जितने भी दर्शन और सिद्धांत सुने उनसे यदि भ्रमित हो तो सबको भूल जाओ। मेरी शरण में आ जाओ।
जो अपने कर्म मुझे अर्पित कर देता है, जो मुझे लक्ष्य मानता है, मेरी पूजा करता है,वह शरीर के बंधनों से मुक्त हो कर मुझ तक पहुँच जाता है।


अपनी मनोकामना की पूर्ति के लिए विभिन्न धर्मों के लोग अलग-अलग रूपों में मेरी पूजा करते हैं अंततः आते सब मेरे ही पास हैं।
आप तक पहुँचे हुए लोगों के क्या लक्षण हैं? किसी ने आत्मसाक्षात्कार कर लिया है, यह कैसे पता चलेगा?
जिसने मुझे पा लिया है वह...
...दुःख और सुख में, हार और जीत में, मान और अपमान में समान भाव रखेगा। मित्र और शत्रु का भेद नहीं मानेगा।
स्वर्ण की डली, मिट्टी का ढेला या पत्थर तीनों उसके लिए समान होंगे।



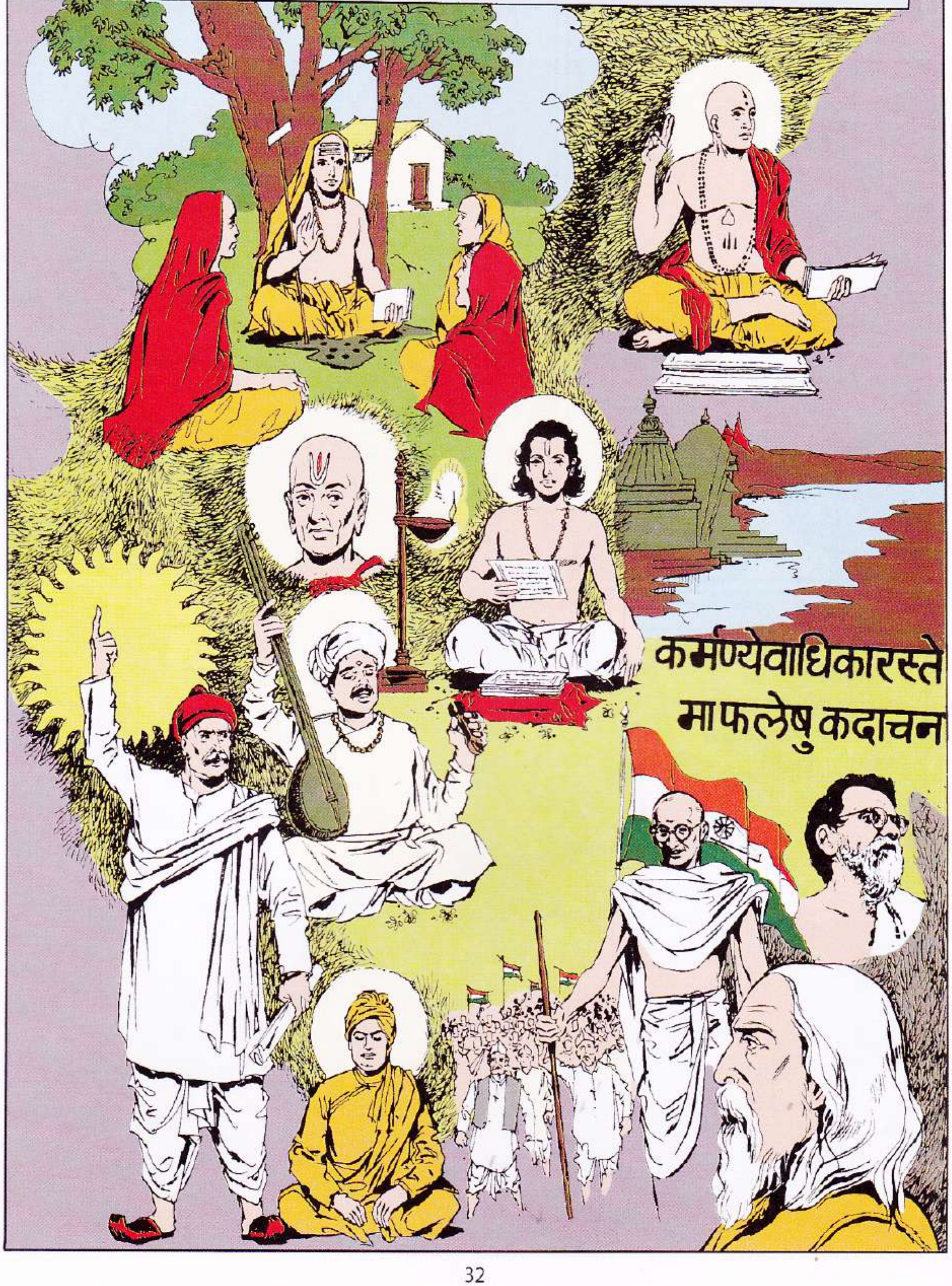
और ऐसा मनुष्य भी कर्म से विमुख न हो। ध्यान दो, अर्जुन, मुझे संसार से कुछ लेना नहीं, फिर भी मैं अनेक कर्म करता रहता हूँ। ऐसा न करूँ तो मेरी देखा-देखी बाकी सब भी निष्क्रिय हो जायेंगे।
उठो, अर्जुन। तुम एक योद्धा हो। न्याय के लिए युद्ध करना तुम्हारा धर्म है।
जय-पराजय, लाभ-हानि, सुख-दुःख को समभाव से देखते हुए युद्ध के लिए तैयार हो जाओ। अपने सब कर्म मुझे अर्पित कर दो।
अपने कर्त्तव्य को जो व्यक्ति बिना फल की चिंता किये करता है, वही सच्चा आत्मज्ञानी होता है। योगी होता है। उठो और एक योगी की भावना से कर्म करो। तुम्हारा कर्त्तव्य तुम्हें पुकार रहा है।


अर्जुन को अपना कर्तव्य स्पष्ट समझ में आ गया।
प्रभु, मेरे सब संशय दूर हो गये हैं। तुम जो कहोगे वही करूँगा।


अर्जुन ने गांडीव उठा लिया...


...और दूर युधिष्ठिर के कानों तक टंकार गूँजी।
कृष्ण की जय हो! अर्जुन क्षत्रिय धर्म का पालन करेगा। उसने लड़ने का संकल्प कर लिया।
अर्जुन ने धनुष उठा लिया!
अर्जुन युद्ध को तैयार!

फिर महाभयंकर युद्ध हुआ। कौरव समूल नष्ट हो गये। कुरुक्षेत्र के युद्ध की गाथाएँ आज तक गायी जाती हैं। किंतु सबसे महत्त्वपूर्ण गाथा है गीता की! श्री कृष्ण भगवान् ने अर्जुन को जो प्रबोधन दिया उसने युग-युग से भारतवासियों को ज्ञान दिया है, प्रेरणा दी है और कर्तव्य की राह दिखायी है।



महाकाव्य और
पौराणिक कथाएं

गीता

महाकाव्य भगवद् गीता को गीता भी कहा जाता है। यह महाभारत में दार्शनिक संवाद रूप में प्रस्तुत है। कौरवों और पांडवों के बीच युद्ध आरंभ होने वाला है। रणभूमि में अर्जुन स्वयं को अपने परिजनों, वरिष्ठजनों और गुरुजनों के सम्मुख खड़ा पाते हैं। उन पर प्रहार करने के विचार से अर्जुन व्यथित हैं। व्याकुल हो वे अपना धनुष फेंककर युद्ध न करने की घोषणा करते हैं। अब कृष्ण पर यह दायित्व आ जाता है कि वे अपने मित्र को जीवन और योद्धा के कर्तव्य को समझाकर नैतिकतापूर्ण ढंग से युद्ध करने के लिए मनाएं।

ISBN 978-81-8482-309-7